डंकल प्रस्ताव
अर्थात्
गुलामी का दस्तावेज

दत्तोपंत ठेंगडी

डंकल प्रस्ताव
अर्थात्
गुलामी का दस्तावेज

दत्तोपन्त ठेंगडी

डंकल प्रस्ताव के समर्थन व विरोध में इन दिनों बहुत चर्चा चल रही है। इस सम्बन्ध में लोगों में काफी जिज्ञासा है। इस तरह के अत्यंत महत्त्व वाले आर्थिक प्रश्न आम आदमी को समझाना भी बहुत मुश्किल काम है। नरसिंहराव ने गलत किया, यह आम आदमी को समझाना कठिन नहीं है किन्तु डंकल ने क्या गलत किया है, यह उसे भली प्रकार समझाना कठिन काम है।

आर्थिक प्रश्न के विषय में मेरी भी भूमिका छात्र जैसी है। मैं स्वयं छात्र बनकर ही इस प्रश्न की ओर देखता हूं। मुझे यह भी लगता है कि सार्वजनिक जीवन में जनता का मार्गदर्शन करने वाले नेता भी यदि छात्र के नाते आर्थिक प्रश्न का अध्ययन करें तो इस देश पर बहुत उपकार होगा।

'डंकल प्रस्ताव और भारत' इस विषय का अध्ययन करते समय मेरे ध्यान में एक बात आयी है कि इस विषय की रचना सही अथवा उचित नहीं है। यह विषय अगर तैयार करना हो तो दो विषय एक साथ लेने होंगे। एक 'डंकल और विकासशील देश' और दूसरा 'भारत एवं विदेशी आर्थिक साम्राज्य।' इस विषय को समझने के लिए कुछ संदर्भ भी ध्यान में रखने होंगे। विदेशी पूंजीपतियों के पास बड़े-बड़े विशेषज्ञ हैं। वह नेताओं को भी खरीद सकते हैं, और संपादक अथवा समाचारपत्रों पर अपना असर जमा सकते हैं। अपने विशेषज्ञों की सहायता से वह

जानकर कि आगे की व्यूह रचना कैसी होनी चाहिए, वे सम्बंधित राष्ट्र की जनता में अपना प्रचार काफी पहले से करना शुरू कर देते हैं।

जब हम कहते हैं कि विदेशी पूंजी नहीं चाहिए तो इस विषय का उल्लेख भी होता है कि यह पूंजी किन शर्तों पर आ रही है। वास्तविकता यह है कि विभिन्न देशों में विदेशी पूंजीनिवेश होता है, और यह होना कोई गलत नहीं है। किन्तु विकसित देशों में उन पर कुछ शर्तें हैं। और हमारे यहां पूंजीनिवेशक राष्ट्र अपनी शर्तें हम पर थोपते हैं।

वैश्वीकरण का अर्थ

हमारे यहां वैश्वीकरण (ग्लोबलायजेशन) की बहुत चर्चा होती है। यह शब्द बड़ा आकर्षक है। किन्तु इस वैश्वीकरण के कारण हमारी बड़ी दुर्दशा हुई है। जिस देश में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का मंत्र हजारों वर्ष पूर्व ही प्रस्तुत किया गया, उसे अब वैश्वीकरण के बारे में पढ़ाया जाएगा। वैश्वीकरण के बारे में हमारी कल्पना है कि प्रत्येक देश स्वतंत्र रहे, सार्वभौम रहे, और यह सब स्थायी रखते हुए विभिन्न राष्ट्रों के साथ अन्तरराष्ट्रीय सम्पर्क व सहयोग बढ़ाया जाय। आज वैश्वीकरण का अर्थ हो गया है विकसित राष्ट्रों द्वारा विकासशील राष्ट्रों का शोषण करना। यह हमें कदापि स्वीकार नहीं है। दूसरा यह, कि हमारे यहां जिस प्रकार राष्ट्रीय अथवा राजनीतिक प्रश्नों पर विचार किया जाता है, उसी पद्धति से आर्थिक प्रश्नों पर भी विचार करने का हमें मोह होता है। डंकल प्रस्ताव पर भी उसी पद्धति से मत व्यक्त किये जा रहे हैं। वास्तविकता यह है कि अन्तरराष्ट्रीय मुद्राकोष, विश्व बैंक, बहुराष्ट्रीय कंपनियों और गैट आदि सभी पर एक साथ विचार किये बिना इसमें से किसी एक पर विचार करना बहुत कठिन है। इन चारों पर एक साथ विचार करना होगा। क्योंकि चारों मिलकर एक योजना है। इसलिए चारों पर एक साथ विचार होना आवश्यक है।

इस तरह के विषय केवल दस्तावेजों से नहीं समझे जाते। कई बातें ऐसी होती हैं जिन्हें कागज पर पढ़ने मात्र से नहीं समझा जा सकता। कागज में पढ़ते-पढ़ते आज सभी की धारणा बन गयी है कि आर्थिक सहायता विकसित राष्ट्रों से विकासशील राष्ट्रों की ओर जा रही है और यदि कोई हमारे समान व्यक्ति कह दे

कि आर्थिक सहायता विकासशील राष्ट्रों से विकसित राष्ट्रों की ओर जा रही है तो सज्जन लोग हमें पागलखाने में भेजने पर विचार करेंगे । जबकि धनराशि का प्रवाह कहां से, कहां को हो रहा है यह एक विचार करने योग्य मुद्दा है । ४९ अरब रुपये दिये गये, यह बात कागज पर दिखायी देती है और लगता है कि हमें इतनी राशि प्राप्त हुई । फिर आगे के पृष्ठों पर यह भी पढ़ने को मिलता है कि १४७ अरब रुपये

सजा देने का अधिकार डंकल को या भारत को ?

ऐसा कहा जाता है कि, हमारे वैज्ञानिक चोरी करते हैं । विदेशों के वैज्ञानिक काफी परिश्रम करके और पैसा खर्च करके कुछ अनुसंधान करते हैं और हमारे वैज्ञानिक पैसा खर्च नहीं करते । और परिश्रम न करते हुए मात्र विदेशी अनुसंधान की नकल उतारते हैं । नकल उतारना एक घृणास्पद कार्य है और उसके लिए डंकल ऐसे वैज्ञानिकों को मृत्युदंड भी देगा तो वह नैतिकता के अनुरूप ही होगा ।

हमारे वैज्ञानिक इस प्रकार का अनैतिक काम करते हैं अथवा नहीं, यह जानने की मेरी क्षमता नहीं । और अन्य किसी की है, इसकी मुझे जानकारी नहीं है । किन्तु एक बात निश्चित है कि, मान लिया जाय हमारे वैज्ञानिक चोर हैं और नकल उतारने के लिए वह दोषी है । पश्चिमी वैज्ञानिक मूलतः अनुसंधान करते हैं और यह चोरी करते हैं । तो भी सवाल पैदा होता है कि इस चोरी के लिए हमारे वैज्ञानिकों को प्राणदंड भी देने का अधिकार किसे होना चाहिए ? भारत के किसी तंत्र को, या हमारे सार्वभौमत्व पर आक्रमण करने वाले विदेशी तंत्र को । इस देश के बाहर किसी भी सत्ता केन्द्र को यह अधिकार देना एक तरह से अपना सार्वभौमत्व समाप्त करना होगा । चोर को दंड जरूर मिलना चाहिए किन्तु दंड देने का वह अधिकार भारत से बाहर किसी भी तंत्र को नहीं होना चाहिए ।

मुनाफा और ब्याज के रूप में कर्जदाता राष्ट्रों को दिया गया । इसका अर्थ यह कि ९८ अरब रुपये की राशि का अंतर आ रहा है । अर्थात हमारे राष्ट्र से यह राशि विकसित राष्ट्रों की ओर गई है ।

अब यह बात कई लोगों के ध्यान में आयी है कि ऋण के रूप में जो राशि निकलती है उसका अधिकांश हिस्सा डेट सर्विसिंग में जाता है और कुछ हिस्सा सरकारी तंत्र पर व्यय करना पड़ता है । विकास के नाम पर जो राशि प्राप्त होती है उसमें से बहुत कम विकास के लिए खर्च की जाती है ।

दो वर्ष पहले हमने समाचारपत्रों में पढ़ा कि अमरीका बहुत उदार हुआ है, औरउसने मिस्त्र का १३ अरब डालर का ऋण माफ कर दिया। जब हम सिर्फ आर्थिक प्रश्न पर विचार करते हैंतो इस कथित 'उदारता' का अर्थ ध्यान में नहीं आता। किन्तु राजनीतिक उद्देश्यों पर हम अगर ध्यान दें तो इस उदारता की असलियत पता चलती है। खाड़ी युद्ध केसमय चूंकि सभी खाड़ी देशों के एक होने की संभावना थी। ऐसे समय कुछ खाड़ी देशों को सद्दाम हुसैन के खिलाफ लड़ाने की आवश्यकता थी। जिनमें मिस्त्र और सऊदी अरब भी प्रमुख थे। अरबों का अरब के खिलाफ लड़ना उचित नहीं, ऐसा मिस्त्र पर दबाव था। इसके बावजूद मिस्त्र ने संयुक्त राष्ट्र की सेना में अपनी भी सेना भेजी। जिसके फलस्वरूप उसका मुआवजा अथवा पुरस्कार के रूप में यह १३ अरब डालर का ऋण माफ कर दिया गया।

अब डंकल प्रस्ताव में जो आया है उसे देखें। यह अन्तरराष्ट्रीय व्यापार के बारे में है। कई लोगों की कल्पना है कि अन्तरराष्ट्रीय व्यापार केवल विदेशों में होता है, हिन्दुस्तान इस क्षेत्र में शून्य है। प्रख्यात अर्थशास्त्री श्री मा. गो. बोकरे ने अपनी एक नयी पुस्तक 'हिन्दू इकॉनामिक्स' में प्राचीन ग्रंथों से उद्धृत करके लिखा है कि अन्तरराष्ट्रीय व्यापार में भारत की क्या भूमिका रही। एक अन्य विद्वान अंजनकुमार भट्टाचार्य ने अपनी पुस्तक 'महाभारतम्' में महाभारत की अन्तरराष्ट्रीय व्यापार के बारे में क्या नीति थी, इसका वर्णन किया है।

शिवाजी की नीति

एकदम आधुनिक काल में जो कुशल शासक थे वह इस बारे में किस तरह का आचरण करते थे, इसकी मिसाल हमारे सम्मुख है। और यदि उदाहरण हीदेना हो तो शिवाजी महाराज का दिया जा सकता है। शिवाजी महाराज के समय अंग्रेज व पुर्तगाली व्यापारी यहां आये थे। उन्होंने कहा है कि हमें हिन्दुस्थान में व्यापार करते समय कहीं भी कोई दिक्कत नहीं हुई, किन्तु केवल शिवाजी के राज में दिक्कत हुई। शिवाजी हमारा सब माल खरीदते थे और फिर कहते थे कि इतनी ही कीमत के नारियल और सुपारी आपको लेनी होगी और उस नारियल एवं सुपारी का दाम वह तय करते थे। किन्तु इसके पूर्व इस बारे में विचार हुआ ही नहीं, ऐसा नहीं है।

अंजनकुमार भट्टाचार्य महाभारत तक जाते हैं और डा० एम० जी० बोकरे वैदिक काल तक जाते हैं।

गैट क्या है ?

गैट का प्रारम्भ एक जनवरी, १९४८ में हुआ। उस समय दूसरे विश्व युद्ध के बाद संयुक्त राष्ट्र संघ का गठन हुआ। टैरिफ रिडक्शन के लिए गैट बनाया गया है, ऐसा बताया गया था। और अपनी मर्यादा के भीतर रहकर गैट ने कई वर्षों तक काम भी किया। इसका अब जो चक्र चल रहा है उसे उरुग्वे चक्र कहा जाता है और यह आठवां चक्र है। इससे पूर्व छह चक्र तक गैट केवल टैरिफ की सीमा तक ही सीमित था। सातवां चक्र टोक्यो हुआ। उसमें नॉन टैरिफ के बारे में थोड़ा विचार हुआ, किन्तु लोगों ने उस पर कोई अधिक विचार नहीं किया। आठवें चक्र में अचानक कुछ नये विषय आयेजो गैट की कार्य सीमा के बाहर के थे। १९४८ से आज तक यह विषय इससे पूर्व कभी नहीं आये थे।

१९७३ मे विकासशील देशों ने पहली बार एक साथ आकर कहा कि, यह उचित नहीं है। अन्तरराष्ट्रीय व्यापार में अधिक समानता रहे ऐसा उनका आग्रह था। १९८१ में हुई कॅन्टॉन कान्फ्रेन्स' में वहां विकसित राष्ट्रों के लोग इकट्ठा हुए थे। उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा कि आपकी अन्तरराष्ट्रीय व्यापार में अधिक समानता सम्बंधी मांग हम स्वीकार नहीं कर सकते। किन्तु उस समय यह भी विचार चल रहा था कि विकासशील राष्ट्रों का शोषण करने की प्रक्रिया को और बढ़ाया जा सकता है क्या ?

अमरीका की डांवाडोल स्थिति

१९८६ में उरुग्वे चक्र प्रारम्भ हुआ। अमरीका के बारे में सभी को ऐसा विश्वास है कि अमरीका सबसे प्रथम क्रमांक का देश है। किन्तु हमेशा ही वह इसी प्रथम क्रमांक पर रहेगा, यह स्वीकार करने का कोई कारण नहीं है। उन्होंने पूंजीवादी अर्थ प्रणाली स्वीकार की है और उसमें विसंगति बढ़ रही है तथा उसी विसंगति के दबाव के नीचे वह दब जाएगी। इस आशय का विचार कुछ बुद्धिजीवियों ने पहले ही व्यक्त किया था। मार्क्सवाद ऐसे ही अंतर्विरोध के दबाव के नीचे दबा हुआ है।

अमरीका में उरुग्वे चक्र शुरू हुआ तो यह स्थिति स्पष्ट दिखायी देने लगी। तब तक अन्तरराष्ट्रीय व्यापार में अमरीका का वर्चस्व था और यह व्यापार वस्तुओं का था। धीरे-धीरे वस्तुओं के व्यापार में अमरीका की प्रतियोगिता की क्षमता कम हो रही है ऐसा दिखायी देने लगा। परिणास्वरूप अमरीका में चिन्ता उत्पन्न हुई। उसने सोचा कि वस्तुओं के व्यापार में हम प्रतियोगिता नहीं कर सकते, तो क्या ऐसे कुछ विषय हैं जहां हम प्रतियोगिता कर सकते हैं ? बैंक, दूरसंचार, अस्पताल, शिक्षा आदि ऐसी सेवाएं हैं जिसमें हम प्रथम क्रमांक पर हैं, वहां प्रतियोगिता की जा सकती है और जिसका अन्तरराष्ट्रीय व्यापार क्षेत्र में अपना लाभ होगा, यह महसूस होने लगा।

किन्तु धीरे-धीरे इन सेवाओं में उनकी जो प्रतियोगिता की क्षमता थी वह भी कम होने लगी अमरीका में सभी का जीवनस्तर बहुत ऊंचा है और उसे कायम रखने के लिए उन्हें पैसे की जरूरत है। और यह धनराशि विकासशील देशों की ओर से लानी हो तो अन्तरराष्ट्रीय व्यापार में अमरीका का वर्चस्व रहना चाहिए। इसीलिए उरुग्वे चक्र में पहले ही वे कुछ बातें लाए जिसमें से एक सेवा क्षेत्र में व्यापार, दूसरी-बौद्धिकि सम्पदा अधिकार तीसरा-व्यापार विषयक निवेश और चौथा-कृषि थे। अभी तक यह चारों विषय कभी बातचीत के विषय नहीं बने थे। जो अब पहली बार ही आये हैं। इसके आने के बाद विकासशील देशों ने इसके खिलाफ आवाज उठायी किन्तु उसका कोई लाभ नहीं हुआ, और यही चर्चा इस समय भी चल रही है।

विदेशी आर्थिक साम्राज्य

उपरोक्त पृष्ठभूमि को ध्यान में रखने पर विदेशी आर्थिक साम्राज्य का आने वाला चित्र स्पष्ट होगा। अमरीका आज जो कर रहा है वह इसलिए, चूंकि आज उसके अस्तित्व का प्रश्न खड़ा हो गया है। उसने विकसशील राष्ट्रों का शोषण अगर नहीं किया तो उसका जीवन स्तर इतना नीचे गिर जाएगा कि परिणामस्वरूप वह समाप्त ही हो जाएगा। हमारे यहां कहा जाता है कि 'हम तो डूबेंगे सनम तुमको भी ले डूबेंगे'— अर्थात हमतो जायेंगे ही तुमको भी ले जायेंगे। और अमरीका जाने वाला है। वह सन् २०१० तक बहुत नीचे पहुंच जाएगा, यह मैं आसानी से कह सकता हूं। उसके पहले भी जा सकता है। अमरीका के बुद्धिजीवियों को भी

ऐसा लग रहा है। यह उनके अस्तित्व का प्रश्न है, यह एकदम स्पष्ट है। और इसीलिए वह इस प्रश्न पर विभिन्न तरीकों से विचार करते हैं।

वित्तमंत्री मनमोहन सिंह ने उदारीकरण का शब्द निकाला है। कितना अच्छा है यह शब्द ! मनुष्य को उदार होना चाहिए, और देश को भी उदार होना चाहिए। किन्तु यह उदारीकरण क्या है। यह एक पवित्र तत्व है ऐसा बताया जाता है। किन्तु वास्तविकता यह है कि मुक्त व्यापार आदि बातों में पवित्रता नहीं होती। व्यावहारिक सुविधा-असुविधा देखकर यह सब चलता है। औद्योगिक क्रांति से पहले ब्रिटेन मुक्त व्यापार का विरोध करता था। जर्मनी का माल ब्रिटिश बाजार में आता था और ब्रिटिश माल प्रतियोगिता में खरा नहीं उतरता था। औद्योगिक क्रांति के बाद वह मुक्त व्यापार का एक कट्टर समर्थक बन गया। आज यदि किसी ने कहा कि पहले उन्होंने मुक्त व्यापार का विरोध किया था, तो किसी को उसका स्मरण भी नहीं होगा।

अब हम जब अपने देश के लिए सुरक्षा उपाय योजना बनाते हैं, तो अमरीका हमसे कहता है कि, आप किस युग में हैं ! आज तो यह समूचा विश्व एक हो गया है और ऐसे समय मुक्त व्यापार होना चाहिए।किन्तु अमरीका में मुक्त व्यापार नहीं है। हम किसानों को अनुदान (सब्सिडी) देते हैं। वे कहते हैं हम अनुदान नहीं देते आप भी अनुदान न दें। किन्तु यह बात गलत है। अमरीका अपने किसानों को बडी संब्सिडी देता है। हमें बताया जाता है कि मुक्त प्रतियोगिता होनी चाहिए। किन्तु उनके यहां है क्या ? पेटेंट, ट्रेडमार्क आदि एकाधिकार दर्शाने वाली बातों को वे ही प्रयोग में लाते हैं। हम यह भाषण सुनने के इतने आदी हो गए हैं कि यह साफ झूठ होते हुए भी हमें लगता है कि यह सही है। किन्तु पेटेंट, मुक्त व्यापार, बाजार अर्थव्यवस्था आदि में परस्पर विरोध है, यह सब हमारे ध्यान में नहीं आता।

उन्होंने सेवा क्षेत्रों में जो किया है उनके सामने हमारी संस्थाएं टिक पाएंगी क्या ? हमारे यहां राष्ट्रीयकृत बैंक प्रणाली है। कुछ निजी बैंक हैं तो कुछ सहकारिता बैंक है। उनके बड़े पूंजीपति यदि यहां आते हैं तो हमारी वित्तीय संस्थाएं यहां टिक पायेंगी क्या ?

पेटेंट के दुष्परिणाम

पेटेंट के दुष्परिणाम किस तरह होने वाले हैं यह जानकारी आम आदमी तक पहुंचाना आवश्यक है। इस दृष्टि से 'नेशनल आर्गनाइजेशन ऑफ पेटेंट लॉज' नामक संस्था बहुत अच्छा कार्य कर रही है। श्री कैला इस संस्था के प्रमुख हैं। और सभी राजनीतिक दल के लोगों ने एक होकर इस संस्था का गठन किया है।

अपने यहां १९७० में इंडियन पेटेंट कानून बहुत सोच समझकर तैयार किया गया था। उसके लिए दो बार संसदीय समितियों का गठन किया गया और अपने देशके बारे में विचार करने के बाद ही यह काननू बनाया गया था। डंकल की बात स्वीकार करनी हो तो यह कानून रद्द करना होगा। अमरीका के पेटेंट काननू की अवधि २० वर्ष है। हमारे यहां पांच वर्ष है। उनका कहना है पांच के स्थान पर २० 'करो। यह एक मुद्दा है, किन्तु मुख्य मुद्दा ऐसा है कि हमारे कानून में प्रक्रिया के लिए पेटेंट प्राप्त करना होता है न कि वस्तुओं का पेटेंट। यह माना जाय कि च्यवनप्राश गुरुकुल कांगड़ी एक पद्धति से बनाता है और जिस पद्धति से गुरुकुल कांगड़ी बनाता है, उस प्रक्रिया का पेटेंट गुरुकुल कांगड़ी ले सकता है, किन्तु च्यवनप्राश का पेटेंट नहीं ले सकता। यदि वस्तुओं का पेटेंट होता है तो केवल गुरुकुल कांगड़ी ही उनके कानून के अनुसार च्यवनप्राश बना सकता है और दूसरी कोई कम्पनी किसी भी पद्धति से च्यवनप्राश नहीं बना

पैकेज डील

पैकेज डील का अर्थ लोगों के ध्यान में नहीं आता। मान लीजिए एक कुबड़ा मनुष्य है। वह विचार करता है कि अन्य लोगों की अपेक्षा मुझमें क्या कमी है। उनके समान ही मेरा नाक कान है, चेहरा है। केवल थोड़ा कूबड़ है, इतना ही।

मान लिया जाये कि ऐसा कुबड़ा मनुष्य जो देखने में खूबसूरत है, किसी स्त्री के साथ प्रेम करता है। तो क्या वह उस स्त्री के सामने शादी का प्रस्ताव रखेगा कि, तू मेरे चेहरे के साथ विवाह कर, कूबड़ के साथ नहीं। शादी करनी हो तो कूबड़ सहित सम्पूर्ण शरीर के साथ करनी होगी। कूबड़ अगर पसंद नहीं हो तो शरीर ही त्याज्य मानना होगा, यह पैकेज डील का अर्थ है। डंकल एक ऐसा ही पैकेज डील है। उसको सभी दोषों के साथ स्वीकार करने की हमारी तैयारी है क्या?

सकेगी । यह एक महत्त्वपूर्ण अन्तर है । अब तक यह सब जानवर, वनस्पति आदि पर लागू नहीं था । अब इन सभी को पेटेंट काननू के तहत लाने की योजना है ।

असीम गुलामी

हमारे राष्ट्रीय औषधि उद्योग और वैज्ञानिकों ने विश्व को वास्तव में चकित कर दिखाया है । मानो विकसित देशों में बनी कुछ दवाइयां उनकी प्रक्रिया से हम अपने यहां बना सकते हैं । और वह दवाइयां उनसे कम दाम पर अपने देश में बेची जा सकती हैं । विदेशों से भी उसकी मांग होती है । यदि इन सबका पेटेंट हुआ तो उसका परिणाम क्या होगा ? एक तो हम यह माल यहीं बना नहीं सकेंगे, और दूसरा यह कि इस विषय का अनुसंधान ही बंद हो जाएगा । आप अनुसंधान करना भी चाहें तो उन्हें रायल्टी देकर उनसे अनुमति लेनी होगी, और आपके अनुसंधान का सारा परिणाम पेटेंट के नियमानुसार उन्हीं की जेब में जायेगा । उसका हमें कोई लाभ नहीं होगा । फिर अनुसंधान कौन और किसलिए करेगा ?

और यह पेटेंटिंग किस सीमा तक गयी है, यह देखें । कृषि के क्षेत्र, रासयनिक उर्वरक, वनस्पति बीज, कीटनाशक आदि सभी चीजों की पेटेंटिंग वह करना चाहते हैं । हम अपने देश में रासायनिक उर्वरक तैयार कर सकते हैं, किन्तु हमें तनिक भी रासायनिक उर्वरक तैयार करने का कोई अधिकार नहीं रहेगा, यह बात उचित नहीं है ।

कारगिल का उदाहरण

इसी तरह का एक किस्सा २९ दिसम्बर को हुआ । कारगिल कम्पनी के कार्यालय पर लोगों ने हमला किया, तोड़फोड़ की । वह बीज बनाने वाली कम्पनी है । हमारा किसान पहले मौसम के कुछ बीज बचाकर दूसरे मौसम के लिए रख देता है । एक बार बीज का पेटेंट हो जाने के बाद हमारा किसान अपने बीज का उपयोग अपनी ही खेती के लिए नहीं कर सकेगा । और मान लीजिए किसी ने किया भी, और फसल की पैदावार की, तो पेटेंट करने वाले भारत सरकार को लिखेंगे कि किसी एक किसान ने उसके बीज का उपयोग कर खेती की है, अतः उसे सजा दी जानी चाहिए । उनकी सजा देने की पद्धति बिल्कुल अलग ही है । आमतौर पर जो आरोप लगाता है, उस पर वह आरोप साबित कर दिखाने की जिम्मेदारी होती

है । किन्तु डंकल साहब का एक अलग ही हिसाब है । बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने एक बार आरोप लगाया तो उसका काम खत्म । पेटेंट का कानून का उल्लंघन नहीं किया गया यह साबित करने की जिम्मेदारी हमारे किसान की है । इस कानून में यह एक अजीब बात है ।

इसका अर्थ यह हुआ कि इस तरह हमारी सारी खेती मारी जायेगी । अपने बीजों से हम अपनी फसल नहीं पैदा कर सकेंगे । पेटेंट करने वालों से बीज लेने पड़ेंगे और जो वह बताएंगे, उसी दाम में लेने पड़ेंगे । ऐसे में किसानों की क्या हालत होगी ? अतः पेटेंट कानून का अर्थ सही-सही समझ लेने की आवश्यकता है ।

किसी एक विषय पर इस देश के वैज्ञानिक जो अनुसंधान करते हैं, उसी समय दूसरे किसी देश के वैज्ञानिक भी उसी विषय पर अपने प्रयोग करते हैं, और वह अपनी जानकारी का आदान-प्रदान करते हैं । यह आदान-प्रदान इस क्षेत्र में बहुत महत्त्वपूर्ण साबित होता है । किन्तु एक बार एकाधिकार स्थापित हुआ तो आप जानकारी नहीं ले सकेंगे । और न दूसरे देश आपको देंगे । यदि यह आदान-प्रदान नहीं होगा तो वैज्ञानिक प्रगति कैसे होगी ? इसके परिणामस्वरूप विज्ञाम का और अनुसंधान का एक बड़ा नुकसान होने वाला है । इससे खेती नष्ट करने का ही एक स्पष्ट उद्देश्य इसके पीछे है । क्योंकि विकसित देशों का अपने अतिरिक्त उत्पादनों के लिए बाजार चाहिए, और वह बाजार विकासशील देश बनेंगे । अपने देश में हम अनाज की पैदावार कर सकते हैं । किन्तु हम अपनी आवश्यकता का पूरा उत्पादन कर सकते हैं तो भी राष्ट्रीय आवश्यकता का ३.३ प्रतिशत बाहर से लाना ही होगा । इस तरह की अनिवार्यता हमारे लिए होगी ।

कई बातें है, हम उसके विस्तृत विवरण में नहीं जाएंगे और जैसा मैंने बताया कि सब का एक साथ विचार किये बिना सम्पूर्ण चित्र स्पष्ट नहीं होगा । इसलिए कुछ लोगों ने यह सुझाव दिया था कि संयुक्त संसदीय समिति के समक्ष यह सब लाया जाए । फिर बाद में यह बात भी सामने आयी कि संयुक्त संसदीय समिति यानी सांसद अर्थात राजनीतिक नेता बैठेंगे । लेकिन उन्हें इस विषय की जानकारी होगी ही, ऐसा जरूरी नहीं । हम लोग भले ही स्वयं को बुद्धिमान समझते होंगे किन्तु

कागज मात्र पढ़ने से यह सब बातें ध्यान में नहीं आएंगी, जब तक हमें कानूनी ज्ञान नहीं होगा । इन चारों विषयों के दस्तावेज इस तरह के हैं कि न्यायविद, वैज्ञानिक, अर्थशास्त्री आदि का एक पैनल गठित कर उसका अध्ययन करने के बाद उसका निष्कर्ष संयुक्त संसदीय दल (जे० पी० सी०) के समक्ष प्रस्तुत करना उचित होगा । हम अपने राष्ट्रहित को तिलांजलि न देकर जितना किया जा सकता है उतना करेंगे, यह कहते-कहते सरकार संभवतः किसी को पता भी नहीं लगने देगी और डंकल प्रस्ताव स्वीकार कर लेगी ।

सार्वभौमत्व पर आघात

वस्तुस्थिति यह है कि यह हमारे राष्ट्र के लिए अस्तित्व का प्रश्न है । इस प्रस्ताव के कारण हमारा सार्वभौमत्व समाप्त हो जाता है और यह प्रश्न मात्र आर्थिक नहीं है । उदाहरण स्वरूप कृषि के लिए उपयोग में आने वाली वस्तुओं के आधारमूल्य कैसे तय हों, इस बारे में हमारे और सरकार के बीच मतभेद हो सकते हैं । किन्तु यह मूल्य अथवा दाम क्या हों ? यह हमें बताने का अधिकार किसी बाहरी ताकत को नहीं है । अनुदान के मामले में हमारे और सरकार के बीच मतभेद होगा, उसे हम आपस में बैठकर बातचीत के जरिए हल कर लेंगे । किन्तु किसी विदेशी शक्ति को यह बताने का कोई अधिकार नहीं है । माल का भंडारण, किस दाम से हम बेचें अथवा सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से कौन सी वस्तु किस मूल्य में दें, यह वे कौन होते हैं तय करने वाले । और अगर उनके द्वारा तय करने के अनुसार हमने अपनी नीति बनायी तो हमारा सार्वभौमत्व और स्वतंत्रता कहां रहेगी ?

यह एक अच्छी बात हुई है कि अन्य विकासशील देशों में इस विषय के बारे में जागृति आना प्रारम्भ हो गयी है । मुझे चार राष्ट्रों के बारे में उनके नेताओं के साथ मिलने से यह जानकारी प्राप्त हुई है । यह भी हो सकता है कि जिन देशों के नेताओं से भेंट नहीं हुई, वहां भी इस तरह की जागृति आयी हो । फिलीपीन्स, श्रीलंका, सिंगापुर और मलेशिया, इन चार देशों में अपनी ही तरह विचार करके जनजागरण करने वाले कुछ लोग मिले थे । उन्होंने बताया कि 'हमारी दिक्कत यह है कि सरकार और सरकार के नेता बिक चुके हैं' तब हमने यह नहीं बताया कि

हमारे यहां भी यही दिक्कत है । हम देशभक्त होने के कारण अपने ही लोगों के बारे में क्या कहें ? किन्तु चार देशों में यह जो जागृति हुई है वह अन्य राष्ट्रों में भी होनी आवश्यक है । ऐसे राष्ट्रों के बीच एक समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया जाना चाहिए । स्वदेशी जागरण मंच इस दिशा में प्रयत्नशील है ।

निर्यात का मुद्दा

विगत दिनों दूरदर्शन पर श्री प्रणव मुखर्जी का एक वक्तव्य सुना था कि डंकल प्रस्ताव से किसानों का कल्याण होगा । क्योंकि उनको अपने माल का निर्यात करने का मौका मिलेगा । उनके इस वक्तव्य के साथ दूरदर्शन पर जो चित्र दिखाये गये उससे प्रतीत होता था कि अपेक्षित निर्यात करने में बड़े बागवानी वालों का महत्त्वपूर्ण योगदान होगा ।

किन्तु अपने देश में सीमान्त और छोटे किसानों की संख्या बहुत बड़ी है । फसल आने के बाद छोटे किसान अपना माल निकटवर्ती बाजार में जाकर बेचने की जल्दबाजी करते हैं । उसे अपना माल कम से कम दाम में बिचौलियों को बेचना पड़ता है । जब तक बाजार में माल का अधिक मूल्य न मिले तब तक प्रतीक्षा करते रहें, बाद में माल को बाहर निकाला जाय तो उसे अधिक दाम मिलेगा, यह बात उसे अच्छी तरह से ज्ञात है । इसके बावजूद वह अनिच्छा से कम दाम में अपना माल बेचता है । क्योंकि उसे तत्काल पैसों की आवश्यकता होती है और दूसरी बात यह कि उसके पास माल रखने हेतु पर्याप्त भंडारण की व्यवस्था नहीं होती । सरकार की नीति के कारण भंडार करने के लिए बिचौलियों को पर्याप्त राशि देनी पड़ती है । जिन्होंने कभी हल नहीं चलाया अथवा जिनके कपड़ों को कृषिभूमि की मिट्टी का धब्बा भी नहीं लगा हो, ऐसे लोगों को भंडार बनाने के लिए राशि प्राप्त होती है । किन्तु जो सीमांत और छोटे किसान अपनी फसल निकालते हैं, उनको भंडार करने हेतु राशि दिये जाने की कोई व्यवस्था नहीं है । यह स्थिति प्रायः सभी सीमांत और छोटे किसानों की है और यही दशा मध्यम श्रेणी के किसानों की भी है । इसमें अपवाद मात्र धनवान किसान हैं और उनकी संख्या बहुत ही कम है ।

ऐसी स्थिति में किसान अपने उत्पादन का निर्यात करने के लिए कैसे तैयार होगा ? जो बहुसंख्यक किसान अपनी स्वयं की इच्छा के खिलाफ कम दाम में अपना माल बिचौलियों को बेचता है उन्हें उसका लाभ बिल्कुल नहीं मिलता और

उसकी ऐसी ही असहाय स्थिति रहेगी । उसका माल बिचौलिया खरीदकर अपने भंडार में रखेगा और देश अथवा विदेशों में अच्छा दाम मिलने तक प्रतीक्षा करेगा । देशी बाजार में मुनाफा हजम करने की दृष्टि से आज वह सबसे ऊपर है । विदेशी बाजार में निर्यात की सुविधा भी ऐसे बिचौलियों को ही उपलब्ध हो सकती है । किसानों के उत्पादन को निर्यात में बढ़ावा अगर मिलता भी है तो उससे लाभान्वित होने वाला वर्ग बिचौलियों अथवा बड़े धनवान लोगों का होगा । इसमें ध्यान रखने योग्य एक पहलू और है कि औद्योगिक क्षेत्र में लघु उद्योग चलाने वाले छोटे उद्योगपति इसी नीति के कारण अपने को संकट में महसूस कर रहे हैं । वह तो छोटी मछलियां हैं, किन्तु उससे भी बड़ी मछली बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की प्रतियोगिता में कहां टिक पाएगी, इसका अनुमान गोदरेज कम्पनी के हाल के अनुभव, से हो सकता है ।

यह तो बड़ी मछली है । उनकी तुलना में किसानों का उत्पादन खरीद कर मुनाफा कमाने वाले बिचौलिये बहुत ही छोटे हैं । बहुराष्ट्रीय कम्पनी ऐसे बिचौलियों के साथ सांठ-गांठ और उन्हें उचित मुनाफा देकर निर्यात करने का एकाधिकार उनसे प्राप्त कर लेगी । अर्थात किसानों के उत्पादन का निर्यात बढ़ने से उसका मुनाफा बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को मिलेगा और अपने इस मुनाफे में से बहुत ही कम वह भारतीय बिचौलियों को देंगे और आम किसान जहां था, वहीं रहेगा ।

सर्वसाधारण किसान की 'बाजार में टिकने की क्षमता' (स्टेइंग कपेसिटी) नहीं बढ़ाने की सरकारी नीति में कोई परिवर्तन होगा, ऐसा अभी ज्ञात नहीं हुआ है । बिचौलियों के विशेषाधिकार समाप्त किये जाएंगे, ऐसी भी कोई बात नहीं है, और न कोई समाचार है । हिन्दुस्तान लीवर की तरह किसानों के उत्पादन में बिचौलियों को कोई महत्त्व नहीं दिये जाने की सद्‌भावना विदेशी पूंजीपतियों के मन में उत्पन्न हुई है, ऐसा भी कोई समाचार नहीं है । अतः ऐसी स्थिति में इन सुविधा अथवा सूहलियतों का लाभ गरीब किसानों को मिलेगा, यह कहना गलत है । हां, बहुत हुआ तो कहा जा सकता है कि किसानों के उत्पादन की निर्यात में वृद्धि होगी । किन्तु उससे होने वाला लाभ भी विदेशी पूंजीपतियों को ही होगा ।